ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
Index Copernicus Value (ICV 2018): 86.20
DOI: https://doi.org/10.29121/granthaalayah.v7.i11.2019.3737

INTERNATIONAL JOURNAL OF RESEARCH – GRANTHAALAYAH
A knowledge Repository

Arts

कलाभिव्यक्ति द्वारा मानसिक स्वास्थ्य एवं आनन्द प्राप्ति

डॉ0 (श्रीमती) बिन्दु अवस्थी [1]
[1] एसोसिएट प्रोफेसर-चित्रकला, बैकुण्ठी देवी कन्या महाविद्यालय, आगरा

शोध-सारांश

कला आनन्द की पर्याय-कला शब्द की व्युत्पत्ति में ही मानसिक स्वास्थ्य का सांकेतिक रहस्य विद्यमान है। भारतीय मतानुसार कला शब्द-कल् धातु से व्युत्पन्न है जिसका अर्थ संस्कृत भाषा में सुन्दर, कोमल, सुखद, शब्द करना, बजना, गिनना इत्यादि है। कला शब्द कड् धातु से भी बना है जिसका तात्पर्य है मदमस्त करना तथा प्रसन्न करना इत्यादि। इसकेअतिरिक्त 'कं अर्थात् आनन्द (कंआनन्दं) लाति इति कला। इस प्रकार संस्कृत साहित्य में लगभग बीस अर्थों में कला शब्द केसंदर्भ मिलते हैं।

मुख्य शब्द – कलाभिव्यक्ति, मानसिक, आनन्द

Cite This Article: डॉ0 (श्रीमती) बिन्दु अवस्थी. (2019). "कलाभिव्यक्ति द्वारा मानसिक स्वास्थ्य एवं आनन्द पराक ." *International Journal of Research - Granthaalayah*, 7(11SE), 196-199. https://doi.org/10.29121/granthaalayah.v7.i11.2019.3737.

यूरोप में कला हेतु आर्ट शब्द प्रचलित है जो लैटिन भाषा के आर्स (Ars) से बना है। इस ग्रीक रूपान्तर का प्राचीन अर्थ में साधारण शिल्प अथवा नैपुण्य विशेष है।[1]

उपरोक्त मतों को जानकर यह समझा जा सकता है कि कलात्मक कार्यों का सम्बन्ध व्यक्ति को सुख प्रदान करने वाले कार्यों से है। कला सत् + चित् + आनन्द का योग है। 'वात्सयायन' के 'कामसूत्र' में कला को धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्षदायिनी माना गया है। अभिनव गुप्त ने 'कलागीतवाद्यादिका' लिखा है। संभवतः 'अभिनव गुप्त' के सामने 'वात्स्यायन' की कला सूची रही होगी जिसका आरम्भ गीत एवं वाद्य से होता है।[2] 'जयदेव' ने काव्य नाटक और कलाओं को एक ही श्रेणी में रखकर सबको इस निष्पत्ति का साधन माना है।[3] अर्थात् हम यह कह सकते हैं कि ललित कलाओं के सृजन से अन्तर्मन को आनन्द मिलता है।

भरतमुनि ने 'नाट्यशास्त्र' में रस सिद्धान्त पर आधारित मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त दिया जो भाव और रस पर आधारित है। यह 2500 वर्ष पहले प्रतिपादित सिद्धान्त है। इन्होंने रस को अनुभव माना और मन की लौकिक वृत्तियों को अलौकिकता प्रदान करने के लिए गुणों में रूपायित किया। पंडित विश्वनाथ ने काव्य से प्राप्त आनन्द को ब्रह्मानन्द सहोदर माना है।[4] परन्तु यह सभी ललित कलाओं पर लागू होता है। श्री विष्णु धर्मोत्तर पुराण में चित्रकार को देश देशांतर का ज्ञाता, सत्यवादी, जितेन्द्रिय, निरोगी, आलस्यरहित तथा सात व्यसनों से रहित होना कहा गया है।[5] साथ ही षडांगो का ज्ञान होना आवश्यक बताया गया है ताकि भावपूर्ण चित्र की रचना हो सके।

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
Index Copernicus Value (ICV 2018): 86.20
DOI: 10.5281/zenodo.3591368

सौन्दर्य बोध की अवस्था- यह ध्यान अथवा योग की अवस्था है। अभिनव गुप्त ने काव्यगत अर्थ ग्रहण के लिए कलाकार द्वारा होने वाले साधारणीकरण को प्रमुख माना है। इसके लिए पहले कलाकार जिम्मेदार है रसिक बाद में। स्थाई भावों का तादात्म्य साधारणीकरण है। यह अवधारणा सौन्दर्यशास्त्र की महत्वपूर्ण खोज है। इसके मनोदैहिक विवेचन से स्पष्ट होता है कि 'साधारणीकरण' एक विशेष प्रकार का प्रत्यक्षीकरण है जिसकी बुनियाद 'स्नायु विज्ञान' एवं 'मनोविज्ञान' में है। साधारणीकरण में प्रेक्षक में दो बातें होती हैं-

1) संबद्ध प्रत्यावर्तन **(conditional reflex),**
2) ध्यान का तन्मय हो जाना (एकाग्र हो जाना)

हमारा प्रयोजन और व्यवहार प्रत्यक्ष एकतान हो जाते हैं[6] तब रसानुभूति हो जाती है और रसिक आनन्द विभोर हो जाता है। उच्चतम स्तर पर रसानुभूति आनन्दविमर्श एवं स्वात्म विश्रान्ति (Self relaxation) का अनुभव है।[7] निम्नलिखित श्लोक इस सम्बन्ध में उल्लेखनीय है-

यतो हस्तः, ततो दृष्टि, यतो दृष्टि ततो मनः
यतो मनः ततो भावः यतोभावः ततो रसः।[8]

अर्थात् जब हाथ, दृष्टि, मन एकाग्र हो जाए तब सृजन में भाव उत्पन्न होते हैं। जब भावों से इन्द्रियों का एकाकार हो जाए तब रसोत्पत्ति ओर रसानुभव होता है। इस अवस्था में अपनी कृति के निर्माण अथवा मूल्यांकन में यदि रचयिता या दर्शक को अपने उपकरणों का प्रयोग करते हुए किए हुए श्रम और खेद का अनुभव नहीं होता है, तो उसे आनन्द की अनुभूति होती है।[9] पंडित राज जगन्नाथ ने 'चिदावरणभंग' की चर्चा करते हुए कहा है कि इस अवस्था में अलौकिक सुख प्राप्त होता है और उसे एक विशेष प्रकार का विश्राम प्राप्त होता है। नवीन लोक और अलौकिक लय का अनुभव करते ही अद्वितीय ध्यानावस्थित दशा हमारी हो जाती है। इसको चमत्कार कहा जाता है।[10] यही अनुभूति है जिसकी अभिव्यक्ति सृजन में दिखाई देती है। कलाकार कृति को जन्म देने की अवस्था में समाधि में लीन हो जाता है।

ललित कलाएँ व्यक्तित्व के शोधन में सहायक हैं- भारतीय दृष्टिकोण से कलाओं के द्वारा सत्यं शिवं की अभिव्यक्ति होती है, परिणामस्वरूप सुन्दर की रचना स्वतः हो जाती है। सामाजिक जीवन में हित की भावना ही कला का उद्देश्य है। नैतिक दृष्टि से कलाएँ मानव को उच्च बनाकर जीवन की समस्याओं के समाधान में मदद देती है। जो कलाओं के मूल सिद्धान्त हैं वे व्यक्ति को समाज के साथ समायोजित होने देने, परेपकार, सहयोग, सामंजस्य और सन्तुलन स्थापित करने में मदद देते हैं। 'राल्फबिन' के अनुसार- कला मनुष्य को क्षुद्र सीमाओं से निकालकर साथी मनुष्यों के प्रति सहानुभूति को तीव्र करती है एवं शक्तिशाली भुजा की ही भांति मानवीय प्रगति को संवेदनशील हृदय का विषय बनाती है।[11]

'विस्कर' के अनुसार विचार में निश्चित गोचर विषय सुन्दरता का एक निश्चित आकार है। यह विचार विभाजित नहीं किया जा सकता है परन्तु इससे विचारों की एक पद्धति का निर्माण होता है जिसको चढ़ाव और उतार की रेखाओ के द्वारा ही व्यक्त कर सकते हैं। विचार जितना उच्च होता है, उतना ही सुन्दर होगा परन्तु छोटे से छोटे विचार में सुन्दरता होती है क्योंकि इससे पद्धति की एक श्रृंखला बनती है। विचार का उच्च आकार व्यक्तित्व में होता है। अतः वह कला महानतम होती है जहाँ व्यक्तित्व उच्चतम रूप से विषय का स्थान ग्रहा करता है। विषय में व्यक्तित्व निखार पाता है।[12] सर हरबर्ट रीड के अनुसार भी कला का मुख्य कार्य भावनाओं की अभिव्यक्ति एवं परस्पर समझदारी बढ़ाना है।[13] टॉलस्टाय का भी यही विचार है कि कला केवल आन्नद

ही नहीं, मानव की एकता के साधन के रूप में कला व्यक्ति तथा मानवता के कल्याण के लिए मानव मात्र में एक ही प्रकार की भावनाओं की उत्पत्ति तथा विकास के लिए अनिवार्य है।[14]

इसी प्रकार 'फ्रायड' (मनोचिकित्सक) ने कहा है कि मनुष्य की जन्मजात प्रवृत्तियाँ अपनी तृप्ति करना चाहती हैं। अनेक प्रकार की प्रवृत्तियाँ इस प्रकार की होती हैं जिनका नग्न तृप्तिकरण समाज के विरुद्ध हो जाता है। जैसे-किशोरावस्था में कामवसना का जाग्रत होना और उसकी तृप्ति चाहना। ऐसी अवस्था में मनुष्य के पास दो रास्ते रह जाते हैं- दमन और शोधिकरण। प्रवृत्तियों की शक्ति के स्वाभाविक प्रवाह को रोक देना दमन कहा जाता है और उनको सामाजिक व्यवस्था के अनुसार मार्ग में प्रवाहित कर देना शोधिकरण कहलाता है। कामवासना को ललित कला में प्रवाहित कर देना शोधिकरण कहलाता है। कल्पित कथाएँ, नाटकीकरण, घनीकरण, प्रतीकात्मकता, युक्ति अभ्यास आदि भी शोधिकरण के माध्यम हैं।[15] इस प्रकार से ललित कलाएँ व्यक्तित्व शोधन में सहायक हैं।

ललित कलाओं का मनःस्थिति एवं मानिसक स्वास्थ्य पर प्रभाव

मानसिक स्वास्थ्य का परिचय किसी भी व्यक्ति के मुख (चेहरे) की प्रसन्नता, प्रफुल्लता और उसके हाव-भाव से लगाया जा सकता है। ऐसा व्यक्ति उत्साही और सर्जक होता है। जिसका अंतःकरण अथवा आत्मा प्रसन्न है, वही व्यक्ति सार्थक सोच के साथ स्वयं तथा समाज को उचित दिशा दे सकता है, कला सृजन का माध्यम भले ही कोई भी हो। 'कलिंगवुड' का विचार है कि आत्मनिर्माण की दृष्टि से कलाकार समाज का द्रष्टा, ऋषि, गुरु या चिकित्सक है।[16]

कलाओं से विरोध का शमन होता है क्योंकि कलाएँ तो आधारित ही सहयोग, सामन्जस्य, संतुलन, विविधता और एकरूपता जैसे सिद्धान्तों पर हैं। आकृतियों, धरातलों तथा वस्तु समूहों का ऐसा सम्बन्ध, ऐसा अनुपात जिससे हमारी ज्ञानेन्द्रियों के सुसम्बद्धता की अनुभूति हो, सौन्दर्य की सृष्टि करता है। कला संजीवनी ऊर्जा की तरह है और सुरक्षा कवच भी। यह मस्तिष्क पर नियन्त्रण पाती है और उसे दिशा भी देती है। कला पारस्परिक संवाद (मौन संवाद भी हो सकता है) स्थापित करती है इससे कलाकार स्वयं ही आनन्दित होता है तथा तनाव से मुक्ति मिलती है। नृत्य, नाटक, अभिनय, फिल्म, चित्र, कार्टून, गीत, संगीत, कहानी आदि के माध्यम से समाज की कुरीतियों और व्यंग्य कर मन की भड़ास निकाली जा सकती है। इससे भी आत्मसंतोष प्राप्त होता है, साथ ही समाज को दिशा भी दी जा सकती है। इसके द्वारा प्रशंसा, डर, ग्लानि आदि के भाव तो बाहर आते ही हैं, साथ ही प्रशंसासुख भी प्राप्त होता है। सौन्दर्य का अनुभव होने पर सर्जक और प्रेक्षक दोनों के मन में जो प्रशंसा के भाव उत्पन्न होते हैं, वे दोनों को मानसिक रूप से प्रसन्न करते हैं। इसका अंततः प्रभाव मस्तिष्क पर ही पड़ता है। अतः सौन्दर्यबोध का मनोवैज्ञानिक महत्व है। रसिक और मनोवैज्ञानिक दोनों ही सौन्दर्यबोध को मानवीय मस्तिष्क की गहराइयों में खोजते हैं क्योंकि इसका सम्बन्ध मानसिक स्वास्थ्य से है।

फ्रायड स्वयं जो कि मनोचिकित्सक थे और हिस्टीरिया जैसी मानसिक बीमारियों की चिकित्सा में रुचि रखते थे, उन्होंने मस्तिष्क की तीन अवस्थाओं चेतन, अवचेतन और अचेतन के बारे में उल्लेख किया है और इनको व्यक्तित्व के स्तर से भी जोड़ा है, वह रोगियों का निदान करते हुस इस निर्णय पर पहुँचे कि बहुत से रोग द्रारीरिक न होकर मानसिक होते हैं। मस्तिष्क की चेतन अवस्था में हमें वर्तमान का पूर्ण ज्ञान एवं सौन्दर्य की बाह्य अनुभूति होती है। 'अवचेतन' (द्वितीय अवस्था) में हमें पूर्णरूपेण ध्यान नहीं रहता है किन्तु आस-पास के वातावरण, उत्तेजनाओं आदि का प्रभाव हमारे मस्तिष्क पर पड़ता है। जैसे-पंखे का चलना। बिजली जाते ही हमें चेतना हो जाती है कि बिजली नहीं आ रही है, पंखा नहीं चल रहा है। तीसरी अवस्था 'अचेतन' की अवस्था है। हमारे व्यक्तित्व एवं नैतिकता पर इसी अवस्था का सबसे अधिक प्रभाव पड़ता है। जीवन के सभी क्षेत्रों पर इसका प्रभाव पड़ता है। हमारे स्वप्न, दिवास्वप्न, व्यवहार सब अचेतन में ही निवास करते हैं। अचेतन मन के

कारण ही अन्तद्दष्टि होती है जो साहित्य, कला-विज्ञान में, इनके सृजन में काम आती है। इनके सृजन में ललित कलाओं से प्रेरणा प्राप्त होती है। यही कारण है कि ललित कलाओं के सृजन से दमित प्रवृत्तियों (वासनाओं) को संतुद्रिट मिलती है। अचेतन में जिस समय विरोधी जटिलताएँ होती हैं, कला का जन्म होता है। कला चेतन और अचेतन को एक कराने में बड़ी सहायक होती है। इससे कलाकार के हृदय को मन-मस्तिष्क को गहरी संतुष्टि और आनन्द प्राप्त होता है। यही आनन्द, उत्साह, प्रफुल्लता, उमंग जैसी भावनाएँ जीवन को प्रवाह देती हैं। व्यक्ति काव्य, कहानी, संगीत, लोकगीत, वाद्य, नाट्य, रंगमंच, फिल्म, चित्रकला जैसे सकारात्मक कार्यों में रुचि लेकर कुंठाओं से मुक्ति पा सकता है। अपने संवेगों का प्रकाशन कर मानसिक रूप से स्वस्थ रह सकता है। कला के द्वारा हम आदर्श संसार की झलक पाते हैं। जीवन की पूर्णता कला के संसर्ग से होती है। कला की मौलिक रचना में कलाकार के मानसिक स्वास्थ्य का राज छिपा है। अतः कला शब्द के भावात्मक अर्थ पूर्ण होते हैं कि कला आनन्द लाती है, मस्त कर देती है। अतः कलाभिव्यक्ति एवं सौन्दर्याभिव्यक्ति के द्वारा मानसिक स्वास्थ्य एवं आनन्द की प्राप्ति की जा सकती है।

संदर्भ

[1] गिरिराज किशोर अग्र0, कला समीक्षा
[2] वही, पृ0- 4
[3] वही, पृ0- 6
[4] प्रकाश वीरेश्वर एवं नुपूर शर्मा, कला दर्शन, पृ0- 23, 24
[5] मालवीय बद्रीनाथ, श्री विष्णु धर्मोत्तर में चित्रकला, पृ0- 16, 17
[6] वही, पृ0- 71, 72
[7] वही, पृ0- 70
[8] वही, पृ0- 71
[9] चिरंजी लाल झा, कला के दार्शनिक तत्व, पृ0- 194
[10] वही, पृ0- 203
[11] जी0के0 अग्रवाल, कला समीक्षा, पृ0- 56 (राल्फडब्लूविन की पुस्तक द एन्साइक्लोपीडिया ऑफ आर्ट से रूपान्तरित)
[12] चि0 ला0 झा, कला के दार्शनिक तत्व, पृ0- 188
[13] हरबर्ट रीड, द मीनिंग ऑफ आर्ट, पृ0- 260
[14] जी0के0 अग्रवाल, कला समीक्षा, पृ0- 56
[15] चि0 ला0 झा, कला के दार्शनिक तत्व, पृ0- 277
[16] जी0के0 अग्रवाल, कला समीक्षा, पृ0- 57 हरबर्ट रीड, द मीनिंग ऑफ आर्ट, पृ0- 260 (रूपान्तर)